

## जीएसटी रेट में कटौती : आम आदमी को फ़ायदा या बीरबल की एक और सरकारी खिचड़ी ?

### उमेश

जीएसटी परिषद की 56वीं बैठक में वित्त मंत्री ने जीएसटी के पूर्ववर्ती चार वर्गीय ढाँचे (5%, 12%, 18%, 28%) को मुख्यतः दो वर्गीय ढाँचे (5%, 18%) में बदलने को मंजूरी दे दी है। 5% रेट आवश्यक वस्तुओं पर लगेगा तथा 18% अन्य वस्तुओं पर। इसके अलावा 40% का जीएसटी रेट विलास एवं हानिकारक वस्तुओं पर लगना है। बहुत सारी जरूरी वस्तुओं को करमुक्त किया गया है।

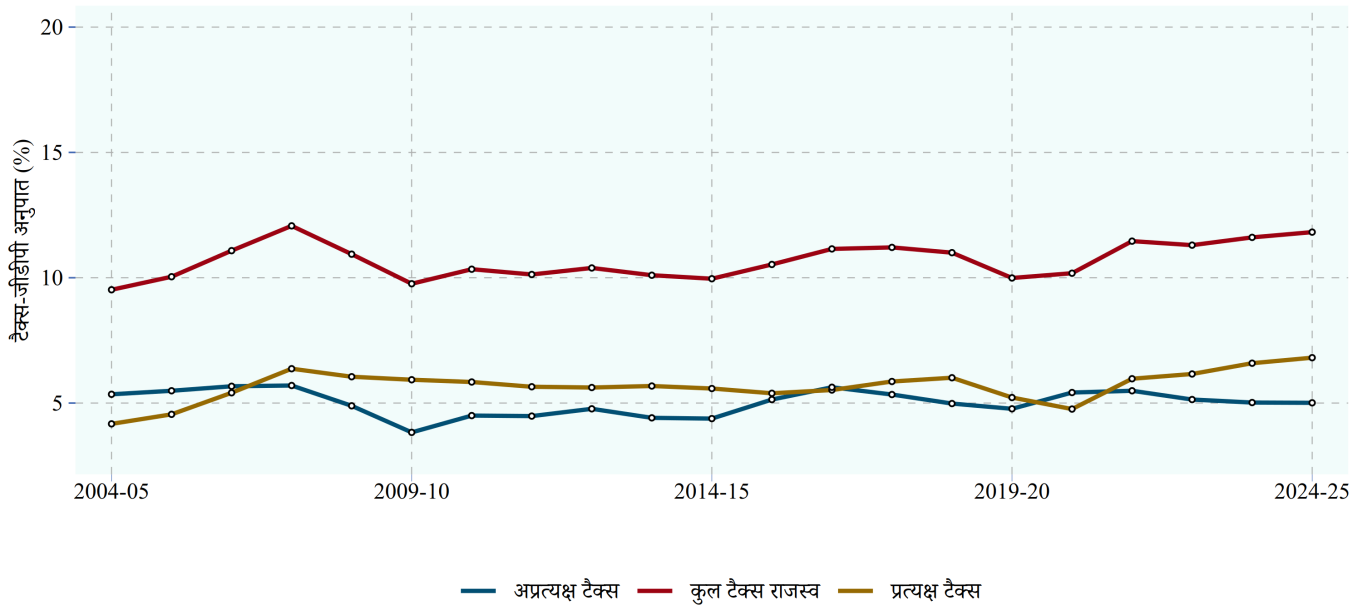
इस बात को जोर-शोर से प्रचारित किया है कि इससे आम आदमी के ऊपर टैक्स भार कम होगा। इसके परिणामस्वरूप घरेलू माँग में इज़ाफ़ा आएगा, छोटे तथा मध्यम उद्योगों को फ़ायदा मिलेगा जिससे भारत के विकास को बल मिलेगा। सरकारी प्रकाशनों में अन्य असंख्य फ़ायदे भी गिनाए गए हैं। यह बात सही है कि जरूरी वस्तुओं पर टैक्स कम करने से लोगों को चुकाने वाली कीमतों में कमी आएगी जिससे उनकी खरीददारी की मात्रा बढ़ेगी। निम्न घरेलू माँग एक बहुत पुराना मुद्दा है जिसे भारत की विकास दर की राह में सबसे बड़ी बाधा माना जाता है। टैक्स के संदर्भ में घरेलू माँग के निम्न स्तर के तीन प्रमुख पहलू हैं: लोगों की क्रय शक्ति (यानी कि उनकी कमाई); कमाई के सापेक्ष चीज़ों के दाम तथा; टैक्स राजस्व के माध्यम से जन कल्याणकारी मदों पर होने वाला खर्च। टैक्स में कटौती निश्चित तौर पर घरेलू माँग में कुछ उछाल लाएगी। लेकिन क्या यह अकेले घरेलू माँग में इतनी बढ़ोतरी ला पाएगी जिससे सरकार द्वारा गिनाए जा रहे अन्य असंख्य फ़ायदे फलीभूत होंगे? इस सवाल का जवाब लोगों की कमाई के स्तर तथा टैक्स राजस्व के माध्यम से जन कल्याणकारी मदों पर होने वाले खर्च के बिना अधूरा रहेगा।

### उल्टी धारा में बह रही है भारतीय टैक्स नीति

इस तरह की स्थिति में टैक्स का प्रगतिशील रूप इस असमानता को थोड़ा-बहुत कम करके माँगों के स्तर को दुरुस्त करता है। प्रगतिशीलता का सिद्धांत कहता है कि बढ़ती आय के साथ टैक्स दर भी उत्तरोत्तर बढ़नी चाहिए। प्रगतिशील टैक्स की यह अवधारणा न सिर्फ़ आर्थिक असमानता को कम करने के लिए, बल्कि अर्थव्यवस्था में संतुलन बनाए रखने के लिए भी जरूरी है। हालाँकि, भारत की टैक्स नीतियों की पड़ताल बताती है कि सरकार टैक्स नीति को उल्टी धारा में बहाने को आकुल है।

## भारत में टैक्स-जीडीपी अनुपात (2004-05 से 2024-25)

राज्यों तथा केंद्र सरकार के प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष और कुल टैक्स राजस्व का जीडीपी से अनुपात

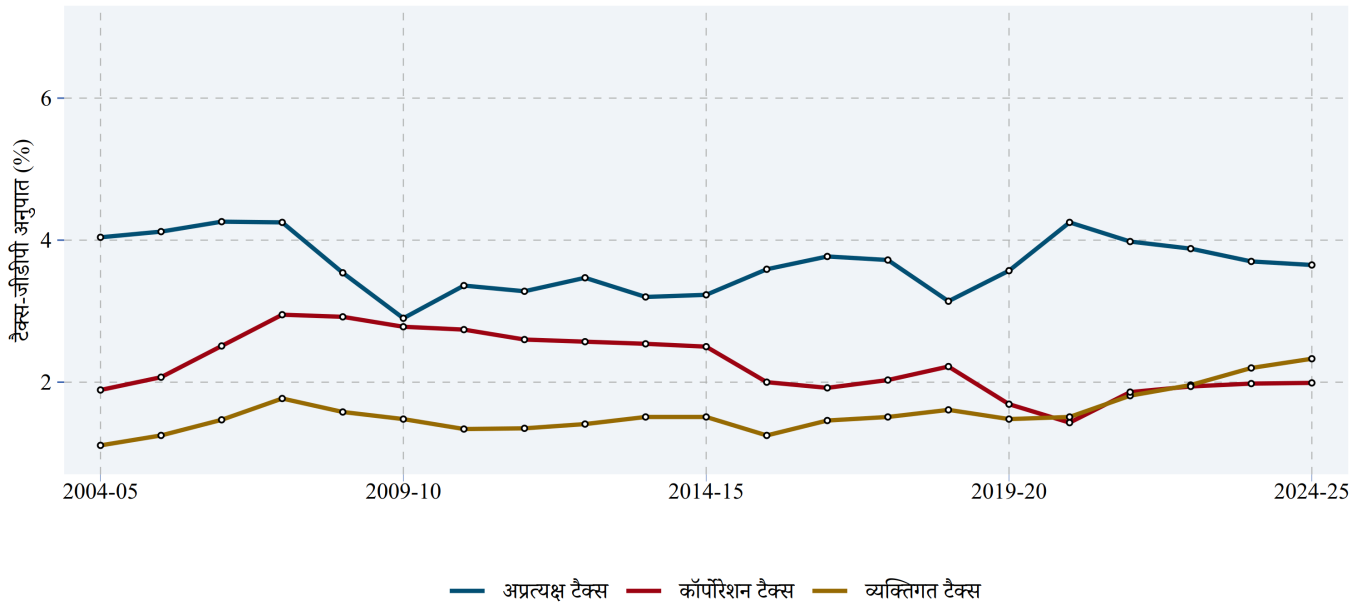


स्रोत: भारतीय रिज़र्व बैंक

भारत का टैक्स-जीडीपी अनुपात बेहद कम है। पिछले दो दशकों में यह 10-12 प्रतिशत के बीच ही झूलता रहा है। ज्यादातर विकसित देशों में यह आँकड़ा 20-25 प्रतिशत से ऊपर है। उपरोक्त चित्र से स्पष्ट है कि टैक्स-जीडीपी में हुई हालिया मामूली वृद्धि प्रत्यक्ष टैक्स वसूली के बढ़ने से हुई है तथा अप्रत्यक्ष टैक्स वसूली गिरी है। प्रत्यक्ष टैक्स सरकार सीधे टैक्सदाता की आय अथवा मुनाफ़े पर वसूलती है—उदाहरण के लिए आयकर, कॉर्पोरेशन टैक्स, धन कर, विरासत कर। भारत में धन पर और विरासत पर टैक्स नहीं लगता। वहीं अप्रत्यक्ष टैक्स को वस्तुओं अथवा सेवाओं पर लगाया जाता है—उदाहरण के लिए जीएसटी, एक्साइज ड्यूटी इत्यादि। प्रत्यक्ष टैक्स ज्यादा प्रगतिशील होता है क्योंकि यह व्यक्तियों अथवा कॉर्पोरेशनों पर लगता है। यह ग़रीब तबके को टैक्स के दायरे से बाहर रखने अथवा उनके लिए कम टैक्स देना संभव बनाता है। अप्रत्यक्ष टैक्स, इसके उलट, इस तरह नीति के क्रियांवयन को असंभव बनाता है। उपरोक्त चित्र से पता चल रहा है कि अप्रत्यक्ष टैक्स की तुलना में प्रत्यक्ष टैक्स और जीडीपी का अनुपात पिछले कुछ सालों में तेजी से बढ़ा है। यह एक सकारात्मक बदलाव प्रतीत हो सकता है। लेकिन इसके पीछे की असली वजह नीचे के चित्र में छुपी हुई है।

## भारत में टैक्स-जीडीपी अनुपात (2004-05 से 2024-25)

केंद्र सरकार का व्यक्तिगत, कॉर्पोरेट तथा अप्रत्यक्ष टैक्स राजस्व का जीडीपी के अनुपात

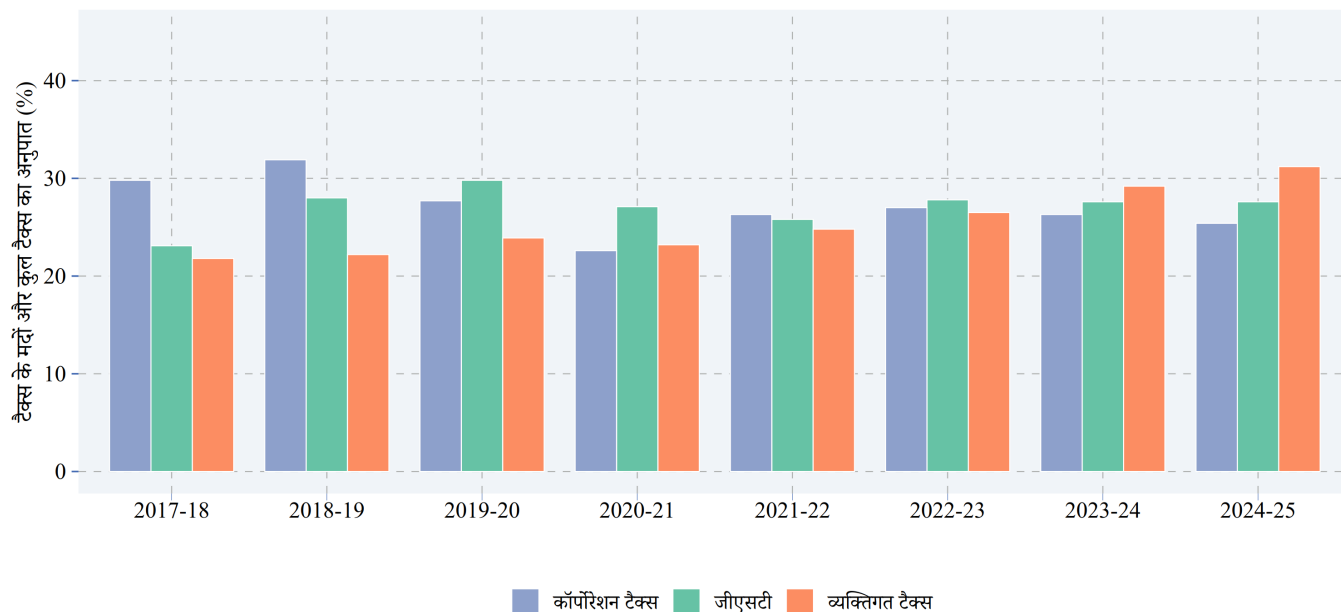


स्रोत: भारतीय रिज़र्व बैंक

यह चित्र केंद्र सरकार के टैक्स और जीडीपी का अनुपात दिखाता है। यह बताता है कि प्रत्यक्ष टैक्स वसूली बढ़ने के पीछे व्यक्तिगत टैक्स वसूली का बढ़ना है। यहाँ यह रेखांकित करना आवश्यक है कि ऐसा बहुत समय बाद हुआ है कि व्यक्तिगत टैक्स-जीडीपी अनुपात कॉर्पोरेशन टैक्स-जीडीपी अनुपात से ज्यादा हुआ है। यानी कि, सरकार लोगों की कमाई पर लगने वाला टैक्स संग्रहण बढ़ा रही है जबकि कॉर्पोरेशनों पर लगने वाले टैक्स को रियायत दे रही है। विकास दर को बढ़ाने और बेरोज़गारी को कम करने का हवाला देते हुए सरकारें अक्सर कॉर्पोरेशन टैक्स को कम करती रहती हैं। कॉर्पोरेटों को मिल रही इस रियायत का परिणाम है कि 2004-05 में कॉर्पोरेशन टैक्स कुल प्रत्यक्ष टैक्स का 62% हुआ करता था, जो 2024-25 में मात्र 38% रह गया है।

## केंद्र सरकार के चुनिंदा टैक्स राजस्व के मदों का कुल टैक्स राजस्व से अनुपात (2017-18 से 2024-25)

जीएसटी, व्यक्तिगत टैक्स और कॉर्पोरेशन टैक्स का कुल टैक्स राजस्व से अनुपात



स्रोत: सालाना बजट के आँकड़े, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार

2017-18 में जीएसटी को लागू किया गया। तब भी कॉर्पोरेशन टैक्स का अनुपात जीएसटी और व्यक्तिगत टैक्स की तुलना में ज्यादा हुआ करता था। कॉर्पोरेशनों को मिलने वाली टैक्स छूटों की वजह से इन तीनों टैक्सों में सबसे कम अनुपात कॉर्पोरेशन टैक्स का रह गया है।

### टैक्स का बोझ मेहनतकों के मत्थे

अमीरों तथा बड़े कॉर्पोरेशनों पर लगने वाले टैक्स को कम करके इसका भार मेहनतकश वर्ग के मत्थे टिकाया जा रहा है। पिछले कुछ दशकों की टैक्स नीतियाँ तथा टैक्स संग्रहण के आँकड़े कॉर्पोरेट परस्ती की तस्दीक करते हैं। पहले से ही राष्ट्रीय आय में मेहनतकों का हिस्सा साल-दर-साल घटता जा रहा है। अरबपतियों की संख्या बढ़ रही है, जबकि देश में 90 प्रतिशत से ज्यादा लोग असंगठित क्षेत्र में काम करने को मजबूर हैं, जहाँ सामाजिक सुरक्षा के बिना अतिनिम्न मज़दूरी पर काम कराया जाता है। ऊपर से टैक्स का भार भी इसी वर्ग पर डाला जा रहा है ताकि चंद अमीरों का मुनाफ़ा बढ़ सके।

मेहनतकों की तुलना में सरकार भी अमीर हो रही है। वर्ष 2000-01 को आधार मानकर प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय, प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय टैक्स संग्रहण और संगठित क्षेत्र का प्रति मज़दूर वेतन का एक इंडेक्स तैयार करके इनमें आए बदलावों को देखा गया। यह इंडेक्स साफ़ तौर पर दर्शाता है 2000-01 के बाद प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय टैक्स संग्रहण सबसे ज्यादा बढ़ रहा है। सबसे धीमी गति से प्रति मज़दूर वेतन बढ़ा है तथा प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय की रफ़्तार इन दोनों के बीच में रही है। पिछले कुछ सालों में इनके बीच की दूरी और तेजी से बढ़ी है। सरल भाषा में इसको ऐसे समझ सकते हैं: सरकार जितना औसत टैक्स एक इंसान से लेती है वो सबसे तेज मात्रा में बढ़ रहा है। प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय इससे धीमी गति से बढ़ रही है। सबसे कम गति से मज़दूरों का वेतन बढ़ रहा है। यानी कि, राष्ट्रीय आय में मज़दूरों का हिस्सा गिर रहा है क्योंकि ज्यादातर आय पूंजीपतियों की जेब में जा रही है। पूंजीपति और सरकार दोनों मालामाल हो रहे हैं और कमाऊ मेहनतकश वर्ग टैक्स भी ज्यादा भर रहा है।

टैक्स के पैसे का फ़ायदा भी जनता—खासकर ग़रीब और मेहनतकश को—कितना मिल रहा है इस बात का अंदाज़ा इस बात से लगा सकते हैं कि जीवनस्तर की बेहतरी तथा पीढ़ीगत सामाजिक असमानता को तोड़कर समान अवसर प्रदान करने की क्षमता रखने वाले सेक्टरों पर खर्च के मामले में भारत दुनिया के फ़िसड्डी देशों में शामिल है। पिछले दो दशकों

से भी ज्यादा समय से शिक्षा पर होने वाला खर्च और जीडीपी का अनुपात 3-4 प्रतिशत से ऊपर नहीं गया है। इसका भी एक बड़ा हिस्सा प्राथमिक शिक्षा पर जाता है, नतीजतन, उच्च शिक्षा पर होने वाला खर्च भी निम्न रहा है। कमोबेश यही हाल स्वास्थ्य का रहा है। स्वास्थ्य पर होने वाले सरकारी खर्च और राष्ट्रीय जीडीपी का अनुपात काफी समय से 1-1.5 प्रतिशत पर अटका हुआ है। यह दुनिया के सबसे कम स्तरों में से एक है। सरकारें अपनी जेब से खर्च करने की बजाय स्वास्थ्य और शिक्षा में निजीकरण को बढ़ावा दे रही हैं।

नवउदारवादी आर्थिक विचार के पुजारी इसकी पुरजोर हिमायत करते हैं। यह नज़रिया उनकी सामाजिक स्थिति और वर्ग हित से मेल भी खाता है। शिक्षा तथा स्वास्थ्य जैसी अत्यावश्यक सेवाओं का निजीकरण पूंजीवादी वर्ग को मुनाफ़ा कमाने का एक अच्छा औज़ार प्रदान करता है। इसके अलावा, यह गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य एवं शिक्षा सेवाओं की उपलब्धता लोगों की क्रय क्षमता के अनुसार तय करता है। इससे समाज में स्वस्थ जीवन जीने और शिक्षा के माध्यम से सामाजिक संरचना में अपनी काबिलियत के हिसाब से आगे बढ़ने का अवसर परिवार की क्रय शक्ति की सीमाओं में बँध जाता है। यानी कि, निजीकरण न सिर्फ़ सामाजिक पदानुक्रम की जड़ों को मज़बूत करता है, बल्कि असमानता की खाई को गहरा भी करता है। टैक्स और सरकारी खर्च की यह नवउदारवादी विचारधारा सरकार की भूमिका को अमीर वर्ग की सिपहसलार तक सीमित कर देती है। यहाँ यह नोट करना आवश्यक है कि नवउदारवादी सरकार सरकारी खर्च को हर तरह की योजनाओं में कम नहीं करती। वह सुनिश्चित करेगी कि लोग भूखमरी से नहीं मरें। अतः मुफ़्त में राशन तो बाँटे जाएंगे; लेकिन वो योजनाएँ जिनसे अमीरों के मुनाफ़े में कमी आए अथवा सामाजिक पदानुक्रम में दरार आए, नवउदारवादी सरकार द्वारा बर्दाश्त नहीं की जाती हैं।

टैक्स संग्रहण से होने वाली आय सरकारी खर्च का प्रमुख स्रोत है। अमीरों और मुनाफ़े को मिलने वाली टैक्स रियायत से टैक्स संग्रहण का स्तर कम रहता है। इससे सरकार के हाथ तंग होते हैं। इस तंगी का खामियाज़ा भी समाज का निचला तबका ही भुगतता है। सरकारें खर्च में कटौती के लिए पहला निशाना सामाजिक ढाँचे में निवेश और लोक कल्याणकारी योजनाओं को ही बनाती हैं। इस तरह से समाज का मेहनकश तबका दोहरी मार खाता है। वो पूंजी को मिलने वाली टैक्स रियायत की भरपाई करने के लिए टैक्स का आधिकाधिक भाग वहन करता है और सार्वजनिक वस्तुओं और सेवाओं में कटौती की मार भी झेलता है।

इन तथ्यों के आलोक में जीएसटी के रेटों में कटौती को कैसे देखा जाए? क्या इससे आम लोगों को वास्तव में फायदा होगा? जवाब है—हाँ, मामूली फायदा तो होगा; लेकिन यह फायदा बेरोज़गारी घटाने, घरेलू माँग को आवश्यक स्तर तक पहुँचाने तथा घरेलू वस्तुओं एवं सेवाओं की खपत को देश के भीतर बढ़ाने में सफल नहीं होगा।

**बढ़ती आर्थिक असमानता और मुनाफ़े को रियायत देने वाली टैक्स नीतियों के खिलाफ़त के बिना नहीं बनेगी बात**

पीएलएफ़एस के आँकड़ों का विश्लेषण करके एक अध्ययन ने दर्शाया है कि नियमित श्रमिकों—जो कि सामान्यतः बेहतर वेतन पाते हैं—की वास्तविक मज़दूरी 2017-18 और 2022-23 के बीच ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों में घटी है। ग्रामीण क्षेत्र में 0.9 प्रतिशत प्रति वर्ष तथा शहरी क्षेत्र में 0.7 प्रतिशत प्रति वर्ष के हिसाब से। अगर 2011-12 से तुलना करें तो यह गिरावट ग्रामीण क्षेत्र में 0.6 प्रतिशत प्रति वर्ष तथा शहरी क्षेत्र में 1.2 प्रतिशत प्रति वर्ष रही है। भारत की आबादी का एक बड़ा हिस्सा मेहनकश है तथा मज़दूरी करके अपना पेट भरता है।

कमाई के मामले में भारत दुनिया के सबसे असमान देशों में से एक है। वर्ल्ड इनइक्वालिटी डेटाबेस के आँकड़ों के अनुसार 2023 में टैक्स के पहले की आय में जहाँ सबसे अमीर एक प्रतिशत का हिस्सा करीब 23 प्रतिशत था वहीं निचली 50 प्रतिशत आबादी का हिस्सा मात्र 15 प्रतिशत था। भारत में आय असमानता पिछले कुछ दशकों में तेजी से गहरी होती गई है। आर्थिक असमानता और घरेलू माँग में सीधा सम्बंध होता है। आय का वितरण जितना ज्यादा असमान होगा, अमीर तबके और कामगार वर्ग के बीच दूरी उतनी बढ़ती जाएगी। सामान्यतः कामगार अपनी आय का ज्यादातर हिस्सा अपनी जरूरतों को पूरी करने के लिए सामानों और सेवाओं पर खर्च करता है। अमीर तबके की बुनियादी जरूरतें एक निश्चित स्तर के बाद ठहर जाती हैं। अतः अगर राष्ट्रीय आय का ज्यादातर हिस्सा सबसे अमीर तबके के पास जाएगा, तो वो माँग पैदा नहीं करेगा। भारत में ठीक यही हो रहा है। मेहनतकश वर्ग को मिलने वाली आय में कमी आ रही है, जिससे माँग निम्न स्तर पर बनी हुई है।

आर्थिक असमानता, मेहनकशों के वेतन में कमी आना और अमीरों के मुनाफ़े में बेशुमार वृद्धि होना घरेलू माँग में कमी आने के प्रमुख कारण हैं। भारत की टैक्स नीति भी अपना प्रगतिशील रास्ता छोड़कर उत्तरोत्तर मुनाफ़े की पैरोकारी करने में लगी है। एक तो मेहनकशों की वास्तविक मज़दूरी घट रही है, ऊपर से सरकारी टैक्स का बोझ भी मज़दूरों पर ही लादा जा रहा है। इस स्थिति में, जीएसटी रेट में कटौती से घरेलू माँग में इज़ाफ़ा होने की उम्मीद करना बीरबल की खिचड़ी पकाना जैसा ही है। जब तक राष्ट्रीय आय में मेहनकशों की हिस्सेदारी बनाने, आर्थिक असमानता को कम करने, बेरोज़गारी को ख़त्म करने, गरिमापूर्ण जीवन स्तर सुनिश्चित करने वाली निम्नतम मज़दूरी तय करने तथा उसे कड़ाई से लागू करने जैसे प्रयास राष्ट्रीय स्तर पर नहीं किए जाएँगे तब तक घरेलू माँग की कमी की समस्या बनी रहेगी। टैक्स की नीति आम जनता को राहत तभी पहुँचा पाएगी जब धन टैक्स तथा विरासत टैक्स को समुचित रूप से लागू किया जाएगा और कॉर्पोरेशन टैक्स जैसे प्रगतिशील टैक्सों को बढ़ाया जाएगा। इस तरह के महत्वपूर्ण नीतिगत बदलावों के बिना जनता को राहत मिलने की बातें सरकारी कागज़ों और घोषणाओं में ही दफ़न रह जाएंगी।